वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

वेद प्रकाश

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः ५ रुपये जनवरी २०१४

कुल पृष्ठ संख्या 20, वजनः 40 ग्राम

अन्तःपथ

स्वामी दर्शनानन्द के शास्त्रार्थ | **३ से १८**
(प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु', अबोहर)

यह तेजस्वियों का तेज, बलियों का बल, ज्ञानियों का ज्ञान, मुनियों का तप, कवियों का रस, ऋषियों का गाम्भीर्य और बालक की हंसी में विराजमान है। ऋषि के मन्त्र गान और बालक की निष्कपट हंसी उसे एक जैसे ही प्रिय हैं। यह शब्द नहीं भाव पढ़ता है, होंठ नहीं ह्रदय देखता है, यह मंदिर में नहीं, मस्जिद में नहीं, प्रेम करने वाले के ह्रदय में रहता है। बुद्धिमानों की बुद्धियों के लिए यह पहेली है, पर एक निष्कपट मासूम को यह सदा उपलब्ध है। यह कुछ अलग ही है। पैसे से यह मिलता नहीं और प्रेम रखने वालों को कभी छोड़ता नहीं। उसे डरने वाले पसंद नहीं, प्रेम करने वाले पसंद हैं। यह ईश्वर है, सबसे अलग पर सबमें रहता है।

यही वैदिक हिन्दू धर्म है। इसी धर्म पर हमें गर्व है।

दो मित्रों के अनुभव

एक बार दो मित्र साथ–साथ एक रेगिस्तान में चले जा रहे थे। रास्ते में दोनों में कुछ तू–तू, मैं–मैं हो गई। बहसबाजी में बात इतनी बढ़ गई कि उनमें से एक मित्र ने दूसरे के गाल पर जोर से थप्पड़ जमा दिया। जिस मित्र को थप्पड़ पड़ा उसे दुःख तो बहुत हुआ किंतु उसने कुछ नहीं कहा। वह झुका और उसने वहां पड़े बालू पर लिख दिया, "आज मेरे सबसे निकटतम मित्र ने मुझे थप्पड़ मारा।" दोनों मित्र आगे चलते रहे और उन्हें एक छोटा सा पानी का तालाब दिखा और उन दोनों ने पानी में उतर कर नहाने का निर्णय कर लिया। जिस मित्र को झापड़ पड़ा था, वह दलदल में फंस गया और डूबने लगा। किंतु उसके मित्र ने उसे बचा लिया। जब वह बच गया तो बाहर आकर उसने एक पत्थर पर लिखा, "आज मेरे निकटतम मित्र ने मेरी जान बचाई।" जिस मित्र ने उसे थप्पड़ मारा था और फिर उसकी जान बचाई थी, से न रहा गया और उसने पूछा, "जब मैंने तुम्हें मारा था तो तुमने बालू में लिखा और जब मैंने तुम्हारी जान बचाई तो तुमने पत्थर पर लिखा, ऐसा क्यों"। इस पर दूसरे मित्र ने उत्तर दिया, "जब कोई हमारा दिल दुखाये, तो हमें उस अनुभव के बारे में बालू में लिखना चाहिए, क्योंकि उस चीज को भुला देना ही अच्छा है, क्षमा रूपी वायु शीघ्र ही उसे मिटा देगा। किंतु जब कोई हमारे साथ कुछ अच्छा करे हम पर उपकार करे तो हमें उस अनुभव को पत्थर पर लिख देना चाहिए, जिससे कि कोई भी जल्दी उसको मिटा न सके"।

प्रस्तुति–डॉ0 विवेक आर्य

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ६३ अंक ६ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, जनवरी, २०१४

सम्पा० अजयकुमार पूर्व सम्पादक : स्व० स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

स्वामी दर्शनानन्द के शास्त्रार्थ

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' द्वारा लिखित

"स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जीवन चरित"

पुस्तक से उद्धृत

"महर्षि दयानन्द के पश्चात् एक तृतीयांश प्रचार का श्रेय स्वामी दर्शनानन्द जी को ही है।"

–श्री महात्मा मुंशीराम जी ने स्वामी शुद्धबोध तीर्थ जी को लिखा था

धर्म के मग में अधर्मी से कभी डरना नहीं।
चेत कर चलना कुमारग में कदम धरना नहीं॥
शुद्ध भावों में भयानक भावना भरना नहीं।
बोधवर्द्धक लेख लिखने में कमी करना नहीं॥

–महाकवि नाथूराम शंकर शर्मा

नारोवाल (पश्चिमी पंजाब) में पादरियों से शास्त्रार्थ

श्री पं० कृपाराम जी (स्वामी दर्शनानन्द जी) के आरम्भिक काल की घटनाओं में उनका नारोवाल का शास्त्रार्थ एक महत्त्वपूर्ण घटना है। यह शास्त्रार्थ श्री पं० लेखराम जी के जीवनकाल में 1894 ई० के लगभग हुआ बताया जाता है।

नारोवाल के 142 हिन्दू व सात मुसलमान (कुल 149) लड़के ईसाई पादरियों के प्रभाव में ईसाई बनने लगे। बप्तिस्मा लेने का समय व दिन निश्चित हो गया। तब पादरियों को सरकारी अधिकारियों का पूरा संरक्षण प्राप्त था। लड़कों के माता-पिता विवश थे। क्या करें, उन्हें कुछ नहीं सूझ रहा था। कुछ अभिभावकों ने नारोवाल के आर्योपदेशक पं० बरकतराम जी से सम्पर्क किया और कहा कि जो खर्च होगा, हम करेंगे, आप जैसे-कैसे अपने किसी शास्त्रार्थ महारथी को लावें ताकि हमारे लड़के पतित होने से बच सकें।

यह पं० बरकतराम जी एक परमोत्साही आर्य सेवक थे। श्री पं० कृपाराम जी के सत्संग से ही आर्य बने थे। **तब इन्हीं लड़कों के अभिभावकों ने इन्हें कहा था कि या तो आर्यसमाज छोड़ दें या हमारी पुरोहिताई छोड़ दें।** पं० बरकतराम जी ने वैद्य का धंधा करके परिवार का पालन-पोषण करना आरम्भ कर दिया। वैदिक धर्म प्रचार में लगे ही रहे। आपने लोगों से कहा, "मैं एक पैसा भी नहीं लूँगा और यह कार्य कर दूँगा।"

आपने भाग-दौड़ आरम्भ कर दी। कहीं पं० लेखराम जी की खोज तो कहीं पं० कृपाराम जी की खोज आरम्भ हो गई। श्री पं० लेखराम जी की तब स्यालकोट जिला में बड़ी धाक थी। बटाला में पं० लेखराम जी का पता लगा। वहाँ तार दिया गया। शुक्रवार तार पहुँचा। रविवार ये लड़के ईसाई बनने वाले थे। पं० लेखराम तो बटाला में न थे। पं० कृपाराम वहीं थे। आने-जाने के लिए न कोई ताँगा, न कोई और साधन। **रात-रात को धुन का धनी कृपाराम चल पड़ा।** पं० श्रीराम जी ने लिखा है कि 22 मील की लम्बी यात्रा चलते-चलते पं० कृपाराम नारोवाल पहुँचे। हमारे विचार में यह दूरी बाईस मील से कहीं अधिक है। भूल से बाईस मील छप गया है।

नारोवाल जाकर एक सरोवर के तट पर बैठकर इस कार्य को करने के लिए कुछ युक्ति सोचने लगे। पं० बरकतराम जी को बुलाया। एक लड़के को लेकर पादरी के घर गये।

पं० कृपाराम जी ने कहा "मैं धर्म का जिज्ञासु हूँ। कुछ चर्चा करनी है। धर्म क्या है? यह बतावें।"

पादरी ने जो कुछ कहा, "उसे कागज पर लिख देने की विनती की। फिर कहा, "मुझे चार-पाँच दिन के लिए बाइबल भी दीजिए। मैं देखकर लौटा दूँगा।" पादरी ने धर्म की परिभाषा काग़ज़ पर लिख दी और बाइबल लेकर बाज़ार में आ गये। आपने भरे बाज़ार में बड़े उत्साह व निर्भीकता से ईसाई मत के खण्डन व वैदिक धर्म की महत्ता पर भाषण देना आरम्भ कर दिया। सारे नगर में शोर मच गया। श्रोता ऐसे खिंचे कि पादरी देखकर दंग रह गये।

पादरी की लिखी "धर्म" की परिभाषा दिखाते हुए आपने कहा कि या तो यह परिभाषा ठीक नहीं और या बाइबल में जो लिखा है, सो ठीक नहीं। पं० कृपाराम जी के इस एक व्याख्यान का यह परिणाम निकला कि **149 में से एक भी लड़का ईसाई न बना।**

पं० कृपाराम जी की प्रेरणा से आर्यसमाज ने तब वहाँ अपनी पाठशाला खोल

दी। पण्डित जी स्वयं उसमें पढ़ने लगे। मुसलमानों ने भी अपना स्कूल खोला। तहसीलदार ने रोष से आर्यसमाज की पाठशाला बन्द करवानी चाही परन्तु कृपाराम दबने वाले न थे। डिप्टी कमिश्नर के साथ पादरी पण्डित जी के पास आए। तब आपने कहा कि ईसाई मत की शिक्षा विषैली है। पादरी पण्डित जी की बातों का कोई उत्तर न दे पाया।

बाज़ारों मे ईसाई लोग 'जय जगदीश हरे' पौराणिक आरती के रचयिता पं० श्रद्धाराम फिलौरी रचित अपना यह गीत गाते घूमने लगे:–

ईसा मेरा राम रमैया, ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया,
मुख से ईसा-ईसा बोल, तेरा क्या लगेगा मोल॥

स्मरण रहे कि साठ रुपये मासिक ईसाइयों से लेकर श्रद्धाराम उनके लिए ऐसे गीत रचा करता था। वैसे यह कम्पोजिटर था।

तब पं० कृपाराम जी ने पंजाबी मे एक कविता रची, जो नगर में गली-गली में गूँजने लगी। कविता के कुछ पद्य नीचे अंकित हैं:–

सच्ची बात हमारी भाइयो, सुन लो जरा खलो[1] के,
वह क्या तुम को मुक्ति देसी[2], जो मर्या[3] रो रो के,
फल अम्बाँ[4] दा किसने खाया, कीकर दा बी[5] बो के,
गुनाहगार को मारे ख़लिक[6], शूली नाल[7] पिरो के,
जो मुर्दे को पूजे मुरख, मरदा[8] काफर होके।

1. खड़े होकर, 2. देगा, 3. मरा, 4. आमों का, 5. कीकर का बीज बोकर, 6. परमात्मा, 7. साथ, 8. मरता है।

इस घटना पर और कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं। जाति प्रेमी, धर्म प्रेमी सज्जन इससे जितनी भी प्रेरणा लें, थोड़ी है। सचमुच कृपाराम पुरुषार्थ का पुतला था।

मौखिक एवं लिखित

कुछ और शास्त्रार्थों का संक्षिप्त विवरण

पं० गोपीनाथ आर्यसमाज से छेड़छाड़ करता ही रहता था। वह वेद-शास्त्र से अनभिज्ञ था। उर्दू ही जानता था। महात्मा मुंशीराम जी से उसके शास्त्रार्थ हुए। उसने श्री लाला हंसराज से भी शास्त्रार्थ छेड़ा। यह कोई मौखिक शास्त्रार्थ नहीं था। पत्रों में ही होता था। गोपीनाथ अपने 'सनातन धर्म गज़ट' में अपना पक्ष रखता था और लाला हंसराज (महात्मा हंसराज तब तक प्राय: लाला हंसराज की कहलाते थे) के तर्कों का प्रतिवाद करने का यत्न करता था। गोपनीनाथ व महात्मा जी के

इस शास्त्रार्थ में पं० कृपाराम जी कूद पड़े। क्यों? कृपाराम जी के शब्द हैं–

"यद्यपि इस शास्त्रार्थ से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं परन्तु वेद मन्त्रों के अर्थ देखकर हम मौन नहीं रह सकते।"

पं० कृपाराम जी ने जो कुछ लिखा है उसे हम यहाँ संक्षेप से देते हैं। इससे उनकी प्रतिभा व सूझ का अच्छा परिचय मिलता है।

वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने के सम्बन्ध में श्रीमान् हंसराज ने ऋग्वेद का निम्नलिखित मन्त्र प्रमाण स्वरूप उद्‌धृत किया–

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुस्तस्मादजायत॥ ऋग्वेद 10-90-1

पं० गोपीनाथ ने चतुराई दिखाते हुए कहा कि इस मन्त्र में सब वेदादि शास्त्रों का वर्णन है। उपनिषद् व पुराण-इतिहास भी इसमें आ जाते हैं। मन्त्र कह रहा है कि ये सब परमात्मा से उत्पन्न हुए।

श्री गोपीनाथ ने एक युक्ति यह भी दी कि इसी सूक्त के एक मन्त्र में परमेश्वर को गाय-घोड़े को उत्पन्न करने वाला बताया है। शेष पशुओं को नहीं। जैसे इस मन्त्र से यह सिद्ध हो जाता है कि गाय-घोड़े आदि सब पशु-पक्षी उसी प्रभु ने बनाये हैं, वैसे ही वेद आदि सब शास्त्र और पुराण प्रभु से उत्पन्न हुए।

श्री पं० कृपाराम जी ने पौराणिकों को उन्हीं का यह प्रमाण सुनाया–

"अष्टादश पुराणानां कर्त्ता सत्यवती सुतः।" महाभारत, आदि पर्व 3-2-67

अर्थात् अठारह पुराणों के बनाने वाले सत्यवती के पुत्र व्यास जी हैं। आपने गोपीनाथ से पूछा कि काशी के सब पण्डित तो व्यास जी को पुराणों का कर्त्ता बताते हैं और तुम इन्हें परमेश्वर कृत बताते हो। यह श्लोक असत्य है क्या? काशी के पण्डितों का कथन भी तुम असत्य मानते हो क्या?

किस शब्द से उपनिषद् व पुराण परमेश्वर कृत सिद्ध हो गये? यह भी बताओ कि कौन-सा इतिहास ग्रन्थ परमेश्वर की रचना है।

रही गाय व घोड़े पशुओं की बात, सो स्पष्ट ही है कि कोई मनुष्य किसी पशु को नहीं बना सकता। सब परमात्मा के ही बनाए हुए हैं, परन्तु इतिहास-पुराण का मनुष्य द्वारा बनाया जाना तो कोई असम्भव बात नहीं।"

इस प्रकार के कई तर्क देकर पं० कृपाराम जी ने गोपीनाथ को चुप करवाया। पौरणिकों के मान्य वेद भाष्य से ही उपरोक्त वेदमन्त्र से चारों वेदों का परमेश्वर कृत होना सिद्ध कर दिया।

श्री पं० कृपाराम जी ने गोपीनाथ के लेख के उत्तर में 'आर्य मैगजीन' में

अपना लेख दिया था।

देवरिया (जनपद गोरखपुर) का शास्त्रार्थ

यह शास्त्रार्थ 16 से 21 अगस्त 1903 तक आर्यसमाज व मुसलमानों के मध्य हुआ। आर्यसमाज की ओर से स्वामी दर्शनानन्द जी ने वैदिक पक्ष रखा। विषय था 'ईश्वरीय ज्ञान वेद या कुरान'।

'आर्य डायरैक्टरी' सन् 1904 में इस शास्त्रार्थ के संबंध में यह छपा है, "आर्यसमाज की ओर से जो उत्तर शास्त्रार्थ में दिये गये तथा जो प्रश्न विपक्ष पर किए गये, उनकी उत्तमता का तो कहना ही क्या हो सकता है। कारण ये आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् स्वामी दर्शनानन्द की ओर से थे।"

यह भी वृत्तान्त मिलता है कि सातवें दिन मौलवी लोग एक दम खिसक गये। शास्त्रार्थ से पूर्व ऐसा कोई निश्चय नहीं था कि इतने दिन तक ही शास्त्रार्थ होगा। इस शास्त्रार्थ की प्रसंगवश अन्यत्र भी चर्चा है।

पादरी गुलाम मसीह से लिखित शास्त्रार्थ

श्री पं० कृपाराम जी ने 1898 ई० में पादरी गुलाम मसीह की पुस्तक रद्दे तनासुख (पुनर्जन्म प्रतिवाद) का 'आर्य मैगजीन' के कई अंकों में उत्तर दिया। यह उत्तम कृति पुस्तक रूप में भी छपी थी। श्री स्वामी जी की पुस्तक का कोई पादरी प्रतिवाद न कर पाया।

एक और शास्त्रार्थः आवागमन विचार-समीक्षा

वैसे तो स्वामी दर्शनानन्द विधर्मियों की प्रत्येक-पुस्तक पुस्तिका का उत्तर अपनी पुस्तकों व ट्रैक्टों के रूप में देते ही थे परन्तु कुछ एक पुस्तकों व ट्रैक्टों के उत्तर उनके पत्रों में लेख रूप में तो छपे, पुस्तक रूप में नहीं आ सके। ऐसे उत्तर-प्रत्युत्तर के रूप में लेख भी तो लिखित शास्त्रार्थ ही थे। अतः ऐसे कुछ शास्त्रार्थों की चर्चा करना आवश्यक है।

ईसाइयों ने 'आवागमन विचार' नाम से एक ट्रैक्ट लिखा। लेखक के ज्ञान के थोथेपन का परिचय इस बात से ही मिलता है कि ईसाई लेखक ने लिखा कि उनके मत के अनुसार ईश्वर कर्म का फल देने वाला है। जबकि हिन्दू यह मानते हैं कर्म अपना फल आप देता है। जब तक फल समाप्त नहीं होता, जीव आवागमन के चक्र में रहता है। इसी भय से हिन्दू पुण्य करते हैं व पाप से डरते हैं।

पं० कृपाराम जी ने उत्तर देते हुए लिखा कि पादरी को भ्रम है कि बाइबल की यह शिक्षा है कि ईश्वर कर्मों का फल देता है। ईसाई तो ईसा पर विश्वास लाने से मुक्ति का होना मानते हैं। वैदिक धर्म ईश्वर को कर्मों का फल देने वाला

मानता है।

पादरी जी ने यह भी लिखा कि ईश्वर न्यायकारी है, वह एक के पाप का दण्ड दूसरे को कैसे दे सकता है।

पं० कृपाराम जी ने लिखा कि वैदिक सिद्धान्त में तो अपने किए हुए कर्मों का फल भोगने की बात है। जीव व शरीर का सम्बन्ध तो 'मकान व मकीं' वाला है। अर्थात् जैसे एक घर में कोई रहता है। एक घर से कोई दूसरे घर में जावे तो क्या घर **बदल लेने के कारण वह अपने लेन-देन के दायित्व से छूट सकता है।** कदापि नहीं। यह शास्त्रार्थ भी 1898 ई० का है।

षड्दर्शन-दर्पण की समीक्षा

इसी प्रकार की ईसाई पुस्तिका षड्दर्शन दर्पण की समीक्षा करते हुए पादरी महोदय का भ्रम-भञ्जन किया। पादरी जी ने मीमांसा दर्शन के बारे में कुछ भ्रामक बातें लिखीं थीं। यज्ञ व देवताओं के बारे जो कुछ घिसी-पिटी बातें पढ़-सुन रखी थीं, वही लिख मारीं। श्री पं० कृपाराम ने देवता कौन है? यज्ञ का स्वरूप क्या है? यज्ञ का प्रयोजन क्या है? इन पर प्रकाश डाला।

'हकीकते वेद' का खण्डन

मौलवी अबू रहमत की 'हकीकते वेद' का युक्तियुक्त उत्तर दिया गया। मौलाना ने श्री पं० लेखराम जी के इस्लाम पर कुछ प्रश्नों का उत्तर देने के लिए लेखनी उठाई थी परन्तु उत्तर देने की बजाए उलटा वेद पर आक्षेप किए। यह तो वैसी ही बात थी जैसे किसी को कोई कहे कि तू काना है और वह आगे से कहे कि तू अंधा है। इससे यह तो सिद्ध हो गया कि उसने अपने आपको काना मान लिया।

श्री पं० कृपाराम जी ने बड़े नपे-तुले शब्दों में पादरी जी के सब आक्षेपों का उसमें उत्तर दिया।

एक जैनी का उत्तर

देवबन्द के एक जैनी वकील ने 'ईश्वर नहीं है' पुस्तक लिखी। आपने तत्काल इस पुस्तक का भी उत्तर लिख दिया।

एक मौलवी शहाबुद्दीन का उत्तर

इस मौलवी ने 'ऐनके चश्म आर्या' लिखी। पं० कृपाराम जी ने इस पुस्तक का भी युक्तियों व प्रमाणों से ठोस व रोचक उत्तर दे दिया।

अनवार अलइस्लाम का उत्तर

स्यालकोट से छपने वाले इस रिसाला में वैदिक धर्म का खण्डन किया गया। किसी आर्य भाई ने स्वामी जी के पास भेज दिया। आपने इसका उत्तर देने में देर

न लगाई। यह उत्तर भी 'आर्य मैगज़ीन' में छपा था

ईशरानन्द नाम के किसी पौराणिक ने ईश्वर के स्वरूप पर कुछ लिखा। आपने 'आर्य मैगज़ीन' में इस पर क्रमशः कई लेख लिखे।

तकज़ीबे हक प्रकाश

सत्यार्थप्रकाश के 14वें समुल्लास के खण्डन में 'हक प्रकाश' नाम से एक पुस्तक लिखी गई। यह पुस्तक सम्भवत: 1900 ई० में छपी। श्री पं० कृपाराम जी ने इसके छपते ही 1900 के आसपास ही इसका उत्तर दे दिया। ठीक सन् तो हमें याद नहीं परन्तु पुस्तक हमारे पास है। स्मरण रहे कि मौलाना सनाउल्ला प्रथम मुसलमान मौलवी थे जिन्होंने सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में पढ़ा था। तब तक यह ग्रन्थ उर्दू में अनूदित नहीं हुआ था। यह सत्यार्थप्रकाश का आप पर प्रभाव था कि हज के समय आपने वहाँ 'संगे अस्वद' कृष्ण पत्थर को नहीं चूमा, जबकि ऐसा करना मुसलमानों के लिए अनिवार्य है।

और जगत्प्रसाद जी को भागते ही बनी

श्री स्वामी जी महाराज के साथ प्रान्तीय सभाओं की अनबन हो गई। इन्हें न पद चाहिए था और न प्रतिष्ठा। कोई प्रलोभन-पाश इस ईश्वरभक्त, महान् वेदभक्त और ऋषिवर के सच्चे चरणानुरागी को अपने मार्ग से हटा नहीं सकता था।

मन में न जाने क्या आया कि झोला उठाकर रावलपिण्डी यह कहकर चल पड़े कि मैं पंजाब जा रहा हूँ। जिसने मुझे रोकना हो, रोक ले।

वहाँ जाकर एक मास्टर का मकान किराये पर ले लिया। इससे आगे जो ये किया करते थे, वही कर दिखाया। प्रेस भी लग गया। पत्र भी निकल आया। साहित्य भी छपने लग गया। श्रीमान् ला० वज़ीरचन्द जी चोपड़ा जैसे प्रतिष्ठित आर्य पुरुष नित्य आपके दर्शन के लिए आकर तृप्त होते थे।

इन्हीं दिनों जगत्प्रसाद नाम के एक पौराणिक वक्ता घूमते-घूमते पेशावर आ गये। जगत्प्रसाद विद्वान् तो नहीं थे परन्तु भाषण कला में प्रवीण थे। आर्यसमाज को कोसना और ऋषि के बारे अनाप-शनाप बोलकर मूर्ख पौराणिकों को ठगना ही उसका धंधा था। साथ हर प्रकाश नाम के एक संस्कृतज्ञ को लिए फिरता था। पेशावर के आर्यों को सूचना मिल गई कि पूज्य स्वामी जी रावलपिण्डी में विराजमान हैं। वहाँ से तीन-चार आर्य पुरुष रावलपिण्डी पहुँचे और सब वृत्त सुनाते हुए कहा कि पेशावर में जगत्प्रसाद प्रतिदिन भाषण देता है। उसको उत्तर देने के लिए आप वहाँ चलिए। इस विषैले प्रचार का प्रतिकार आवश्यक है।

स्वामी जी ने कहा, "मेरा तो सभा वाले विरोध कर रहे हैं। मैं आर्यसमाज के

प्रतिनिधि के रूप में क्या शास्त्रार्थ करूँ?"

ऋषि के नाम व काम पर सब कुछ वार देने वाले दर्शनानन्द अपने स्वभाव के अनुसार झट से शास्त्रार्थ करने के लिए तैयार हो गये। पेशावर पहुँचकर गर्जना आरम्भ कर दी। कुछ शास्त्रार्थ हुआ। जब समय पूरा हो गया तो स्वामी जी ने अगले दिन भी शास्त्रार्थ होगा, ऐसी घोषणा कर दी। जगत्प्रसाद स्वामी जी से ऐसा आतंकित हुआ कि रात ही रात में बिस्तरा बाँध कर भाग गया। पौराणिक भी उसका अता-पता पूछते रह गये। उसने फिर मुड़कर देखा ही नहीं। वैदिक धर्म का जय-जयकार हो गया।

और नमाज का समय हो गया

नौ अप्रैल 1904 को आर्यसमाज नगीना (उ०प्र०) के एक सम्मेलन में श्री स्वामी जी ने **'वेद और कुरान'** विषय पर एक तुलनात्मक व्याख्यान दिया। मुसलमानों में इससे कुछ हलचल पैदा हुई। 19 अप्रैल को एक मौलाना श्री अरतजा अली ने श्री कल्लूसिंह को एक पत्र लिखा कि यदि, "मुंशी बाबू कृपाराम का विचार शास्त्रार्थ का हो तो तिथि से सूचित करें।"

आर्यसमाज के मंत्री जी ने उस दिन उत्तर दिया कि श्री कल्लूसिंह तो आर्यसमाज के सदस्य भी नहीं, उनके निवास पर स्वामी दर्शनानन्द जी का व्याख्यान अवश्य हुआ। स्वामी दर्शनानन्द जी रेल से प्रस्थान कर गये हैं। आपको यदि शास्त्रार्थ करना ही है तो आर्यसमाज इसके लिए तैयार है। आप हमें सूचित करें। नौ अप्रैल को मौलाना मुहम्मद इस्माईल ने व्याख्यान के बीच में ही कुछ बोलना चाहा था। आर्यसमाज ने कहा, व्याख्यान के पश्चात् आपको जो कहना हो, कह सकेंगे। मौलाना, "नमाज़ का समय हो गया।"-यह कहकर चलते हुए। स्वामी जी व्याख्यान के तीन घण्टे पश्चात् तक प्रतीक्षा करते रहे। तीन घण्टे के पश्चात् वे गाड़ी पर प्रस्थान कर गये। स्वामी जी के सामने आने का उन्हें साहस ही नहीं हुआ।

इसी काल में आपका मुसलमानों से अबोहर पंजाब में एक शास्त्रार्थ हुआ था। प्रतिपक्षी मौलाना सनाउल्ला को आपने निरुत्तर कर दिया। विषय जीव तथा प्रकृति का अनादित्व।

उनके दो और शास्त्रार्थ

सन् 1908 में मुजफ्फरनगर में 'स्त्रियों को वेदाध्ययन का अधिकार' विषय पर श्री स्वामी जी का पौराणिकों से शास्त्रार्थ हुआ। शास्त्रार्थ के अध्यक्ष श्री पं० मुरारीलाल जी शर्मा थे। श्री स्वामी जी ने पौराणिकों को निरुत्तर कर के श्रोताओं

पर गहरा प्रभाव डाला।

अगले ही वर्ष सन् 1909 में नजीबाबाद (जिला बिजनौर) में आपका मुसलमानों से एक बहुत बड़ा शास्त्रार्थ हुआ। इसका विषय था, 'ईश्वरीय ज्ञान वेद है या कुरान'? इस शास्त्रार्थ के सभापति भी पं० मुरारीलाल जी शर्मा थे। इस शास्त्रार्थ में स्वामी जी के तर्कों को सुनकर श्रोता भाव-विभोर होकर वेद भगवान् की जय, वेद भगवान् की जय के जयघोष लगाते रहे। वैदिक धर्म की जय के गगन भेदी जयकारों से आकाश गूँज रहा था।

दो और शास्त्रार्थ

श्री स्वामी जी के दो और शास्त्रार्थों की कुछ चर्चा हम पहले कर चुके हैं। ये दोनों शास्त्रार्थ सन् 1912 में हुए। ये दोनों शास्त्रार्थ श्री स्वामी जी के जीवन में बड़े महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

आठ अप्रैल सन् 1912 को महाविद्यालय ज्वालापुर के वार्षिकोत्सव पर आर्यसमाज के एक और प्रसिद्ध दार्शनिक पं० गणपति शर्मा जी से 'वृक्षों में जीव' विषय पर आपका शास्त्रार्थ हुआ। दर्शनप्रेमी विद्वानों के लिए यह शास्त्रार्थ एक दुर्लभ अवसर था। यह शास्त्रार्थ छपा हुआ मिलता है। दोनों शास्त्रार्थी एक-दूसरे के विद्या, ज्ञान व सौजन्य का बड़ा सम्मान करते थे। जिन गुणियों ने इस शास्त्रार्थ को सुना, वे आजीवन इसकी चर्चा करते रहे।

अजमेर का शास्त्रार्थ

यह शास्त्रार्थ तीन जून 1912 को जैन पण्डित श्री गोपालदास जी बरैया व स्वामी दर्शनानन्द जी के मध्य हुआ था। श्री गोपालदास जी अपने समय के विख्यात जैनी विद्वान् थे। इस शास्त्रार्थ के सभापति भी एक जैनी बंधु थे। स्थान का निर्णय भी जैनी भाइयों ने किया, जो दूर पड़ता था और बहुत कड़कती धूप के कारण सहस्रों लोग इस शास्त्रार्थ को सुनने से वंचित रहे। शास्त्रार्थ मौखिक हो अथवा लिखित, इसी वादविवाद में एक घण्टा नष्ट हो गया। जैनी भाई लिखित शास्त्रार्थ करने के लिए कतई तैयार न हुए तो स्वामी जी ने मौखिक शास्त्रार्थ करना ही स्वीकार किया।

इस शास्त्रार्थ का विषय था, 'ईश्वर सृष्टिकर्त्ता नहीं है'। इस शास्त्रार्थ के विषय के महत्त्व के कारण आर्यसमाजेतर सब प्रकार के लोगों ने इसमें रुचि ली। इस शास्त्रार्थ को सुनने वाले अनेक लोगों का यह मत था कि ईश्वर की सत्ता व स्वरूप पर उन्होंने अपने जीवन में ऐसी पाण्डित्यपूर्ण चर्चा कभी नहीं सुनी। सृष्टि की रचना व सृष्टि के कर्त्ता के संबंध में जैनी विद्वान् के एक-एक आक्षेप का

स्वामी दर्शनानन्द जी ने ऐसा उत्तर दिया कि आज भी इस शास्त्रार्थ को पढ़कर विवेकशील पाठक झूम उठता है। इस शास्त्रार्थ का अपूर्व प्रभाव पड़ा। पण्डित दुर्गादत्त शास्त्री व पण्डित शम्भुदयाल जी तो तत्काल जैन मत तज कर आर्यसमाज में प्रविष्ट हो गये। इनके अतिरिक्त भी कई जैनी आर्यसमाज के सभासद बनकर नास्तिकता के गर्त से निकल गये। यह शास्त्रार्थ स्वामी जी के प्रिय श्री पं० नृसिंह शर्मा ने प्रकाशित करवाया था।

स्वामी दर्शनानन्द जी की मौलिक सूझ के कुछ अविस्मरणीय उदाहरण

यदि मकान में आग लग जावे तो जैनी क्या करेंगे?

केसरगंज, अजमेर में जैनियों से पन्द्रह दिन तक शास्त्रार्थ होता रहा, जिसका प्रभाव बड़ा व्यापक रहा। इसमें अनेक जैनी विद्वानों ने भाग लिया था। एक विद्वान् ने खड़े होकर आर्यों को चेतावनी देते हुए कहा कि 'अहिंसा परमो धर्मः' जो जैन धर्म ग्रन्थों में है, वह आर्य धर्म में व वेद में नहीं पाया जाता।

स्वामी दर्शनानन्द जी खड़े हुए और उन्होंने कहा कि जैनियों में तो नाम मात्र की ही अहिंसा है। जैन भाई जल की एक बूँद में एक लाख से भी ऊपर जीवों का होना मानते हैं। इसलिए जल को उबाल कर व छान कर पीते हैं। स्वामी जी ने आगे प्रश्न किया कि यदि कहीं किसी बड़े भवन में पाँच सौ जैन साधु रहते हों और वह मकान चारों ओर से बन्द पड़ा हो और उसके भीतर आग लग जावे तो उस अवस्था में जैन बंधु क्या करेंगे?

क्या जल से आग बुझावेंगे या नहीं? यदि नहीं बुझाते तो जैन साधु मरते हैं और यदि जल को डाल-डालकर अग्नि-शमन करते हैं तो असंख्य जीवों की हिंसा होती है।

इस प्रश्न को सुनकर वह पण्डित तो भौचक्का-सा रह गया। वह अपना प्रश्न ही भूल गया और एक ओर होकर बैठ गया।

स्वामी जी ने कहा कि जब जल जैसी वस्तु में इतने जन्तु हैं, तब भोजन में, स्नान में व जलपान में जो नित्य कर्म हैं–इनके करने में अरबों जीवों की हिंसा होती है। तब महावीर स्वामी ने "अहिंसा परमो धर्मः" का पाठक कहाँ से पढ़ा दिया।

इस प्रकार का एक प्रश्न जैनियों की एक सभा में एक विद्वान् जैन मुनि से श्री पं० मनसाराम जी वैदिक तोप ने किया था। उस जैन मुनि को यह पता नहीं

था कि प्रश्नकर्त्ता कौन है परन्तु उसने प्रश्न सुनते ही उत्तर देने की बजाए किसान वेश में सभा में उपस्थित उस प्रश्नकर्त्ता श्रोता से कहा, "भाई, ऐसा प्रश्न तो पं० मनसाराम ही कर सकता है।"

जैन मुनि ने प्रश्न की गम्भीरता को समझते हुए कहा था कि ऐसा प्रश्न पं० मनसाराम ही कर सकते हैं। यह मुनि उन्हीं के कार्यक्षेत्र में प्रचार कर रहे थे। उनका यह कथन सच ही था। प्रश्नकर्त्ता स्वयं श्री पं० मनसाराम जी ही थे। यह घटना रामा मण्डी, जिला भटिण्डा की है।

इसी को पुनर्जन्म कहते हैं

स्वामी जी का कहीं मुसलमानों से शास्त्रार्थ हो रहा था। शास्त्रार्थ का विषय था पुनर्जन्म। आपने अपने प्रतिपक्षी मौलाना से यह पूछा कि कयामत के पश्चात् कब्रों से मृत लोग उसी शरीर को लेकर खड़े होंगे, जो शरीर कब्रों में दबाया गया या उन्हें कोई नया शरीर मिलेगा?

यह प्रश्न मौलाना के लिए बड़ा गंभीर और विचित्र भी था। क्या उत्तर दें? मुसलमान तो मानते ही हैं कि जब कयामत आएगी तो मुर्दे कब्रों से उठेंगे। यह कौन विचार करता है कि कैसे उठेंगे? उसी शरीर के साथ जो दबाया गया था अथवा किसी नये शरीर के साथ खड़े होंगे?

मौलाना के मुख से निकला, "नया शरीर होगा।" यह वह कैसे कहते कि यह शरीर होगा जिसे ये लोग प्रतिदिन फ़ानी (नाशवान्) बताते हैं।

स्वामी जी ने कहा, "मौलाना साहब, बस नये शरीर का प्राप्त होना ही तनासुख़ (पुनर्जन्म) कहलाता है।"

स्वामी जी का यह कहना था कि पक्ष व प्रतिपक्ष दोनों ही दलों पर इस मौलिक सूझ का एक अद्भुत प्रभाव पड़ा। सब श्रोता एकदम बड़े आश्चर्य चकित से होकर रह गये कि इस तर्कमूर्ति—इस महान् दार्शनिक ने पलक झपने जितना भी समय नहीं लिया और प्रतिपक्षी को अपनी निराली युक्ति से चुप करा दिया है। मौलाना तो देखते ही रह गये परन्तु स्वामी जी की मन्द-मन्द मुस्कान एवं गंभीर मुद्रा तब देखते ही बनती थी।

उस समय वाणी से भले ही विरोधी दल से कोई कुछ नहीं कह रहा थ। सबने चुप्पी साध ली परन्तु हृदय से तो सभी यह मान रहे थे कि स्वामी जी की युक्ति का कोई उत्तर है ही नहीं।

पं० चमूपति जी भी कहा करते थे कि पुनर्जन्म तो मुसलमान व ईसाई भी मानते हैं परन्तु उनकी पुनर्जन्म की मान्यता अधूरी है। वे मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग व नरक में इस जन्म के भले-बुरे आचरण के अनुसार (मुहम्मद व ईसा पर

विश्वास करने से भी) सुख दुःख का भोगना मानते हैं। यह सुख-दुःख मृत्यु के पश्चात् शरीर मिलने (अर्थात् नवीन चोले के धारण करने से) ही तो होगा। परन्तु यह भी तो बताएँ कि इस जन्म के सुख-दुख किन पूर्व कर्मों के अनुसार जीवों को भोगने पड़ रहे हैं। मृत्यु के पश्चात् चोला मिलता है तो जन्म से पूर्व मृत्यु भी माननी पड़ेगी। इस जन्म के सुख-दुःख भी किसी पूर्व जन्म के कर्मों के फलस्वरूप हैं।

तो मौलाना निरुत्तर हो गये

श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने अपने संस्मरणों में लिखा है कि एक बार एक मुसलमान भाई ने स्वामी जी से कुछ प्रश्न किये। स्वामी जी ने उत्तर दिया और कुछ प्रश्न भी कर दिये। उसने कहा—"पंडित साहब, मैं सायल (प्रश्नकर्त्ता) हूँ। आपको मेरे ऊपर एतराज (आक्षेप) करने का अधिकार नहीं।" पं० कृपाराम जी ने तुरन्त उत्तर दिया—"पहले आप सायल (प्रश्नकर्त्ता) थे। अत: मैंने केवल उत्तर दिया था। फिर आपने मेरे उत्तर पर एतराज (आक्षेप) किया, इसलिए आप सायल नहीं 'मोतरिज़' (आक्षेपकर्त्ता) हो गये। इसलिए मुझे आप पर आक्षेप करने का अधिकार हो गया।"

इस्लाम का एक निरालापन

बहुत पुरानी घटना है। आर्यसमाज सहारनपुर का उत्सव था। पं० गणपति शर्मा जी व स्वामी दर्शनानन्द जी सरीखी विभूतियाँ आमन्त्रित थीं। इस अवसर पर मुसलमानों से शास्त्रार्थ भी रखा गया। इस्लाम की ओर से श्रीमान् मौलाना सनाउल्ला अमृतसरी पधारे। शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ तो मौलाना ने बड़े गर्व से कहा कि यह कौन-सा प्रश्न है आर्यों का, जिसका उत्तर इस्लाम के पास नहीं है।

जब स्वामी जी की बोलने की बारी आई तो आपने कहा कि आप दावा तो करते हैं किन्तु हमारे पास वह तर्क है, जिसका उत्तर समस्त इस्लामी जगत् के मौलवी मिलकर भी नहीं दे सकते।

स्वामी जी ने कहा, "सारे विश्व का नियम है कि सब अशिक्षित लोग शिक्षित लोगों का अनुकरण करते हैं और उनसे शिक्षा व ज्ञान प्राप्त करते हैं। इसीलिए विद्यालयों में सब शिक्षित विद्वान् अध्यापक, प्राध्यापक रखे जाते हैं। मौलाना जी, यह इस्लाम की क्या बुद्धिमत्ता है कि उनके बड़े-बड़े विद्वान् हजरत मुहम्मद साहब के पीछे चलते हैं और मुसलमान बड़े अभिमान से कहते हैं कि आँ हज़रत 'उम्मी' थे अर्थात् एक भी अक्षर नहीं पढ़े थे। क्या मुसलमानों में इतनी हिम्मत है कि किसी अशिक्षित को कालेज का प्रिंसिपल बना दें? फिर उससे बी०ए०,एम०ए० के विद्यार्थियों को शिक्षा दिलवायें।" स्वामी जी ने गर्ज कर कहा कि यह आर्यों

का तर्क है, इसका उत्तर इस्लाम के पास है तो दीजिए। मौलाना यह तर्क सुनकर ऐसे घबराए कि उन्हें कुछ भी उत्तर न सूझा और श्रोता स्वामी जी के इस प्रश्न को सुनकार बहुत हँसे।

मैं दूरभाष से शास्त्रार्थ करूँगा

सन् 1953 में श्री आचार्य रामदेव जी (स्वामी सत्यानन्द) ने हमें स्वामी जी के जीवन की एक रोचक घटना सुनाई। यह उनकी मौलिक सूझ व प्रत्युत्पन्न-मति का बहुत अच्छा परिचय देती है।

मौलवी सनाउल्ला साहब आर्यसमाज के एक उत्सव पर शास्त्रार्थ के लिए जा रहे थे। शास्त्रार्थ ईसाइयों से भी था। मौलाना जब स्टेशन पर पहुँचे तो एक पादरी भी मिल गये। मौलाना समझ गये कि यह भी शास्त्रार्थ के लिए ईसाइयों के प्रतिनिधि के रूप में जा रहे हैं। जान-पहचान थी ही। दोनों एक ही डिब्बे में बैठ गये। भीड़ कोई विशेष नहीं थी। दोनों में वार्तालाप होने लगा।

पादरी जी ने मौलाना से कहा कि क्या करें स्वामी दर्शनानन्द ने बड़ा तंग कर रखा है। जहाँ-कहीं भी आर्यसमाज से शास्त्रार्थ हो, यह पहले ही पहुँच जाते हैं। इसलिए प्रत्येक शास्त्रार्थ में आर्यसमाज की विजय होती है। मौलाना साहब! आर्यसमाज को शास्त्रार्थ में कहीं पराजित करने का उपाय करना चाहिए।

मौलाना बोले कि उपाय क्या किया जावे। सब स्थानों पर स्वामी दर्शनानन्द पहुँच जाते हैं। इनके होते पराजित करना अति कठिन ही नहीं, असम्भव है।

सोच-सोचकर एक विधि इन्हें सूझी। एक ही दिन अर्थात् एक ही तिथि पर भिन्न-भिन्न स्थानों से शास्त्रार्थ के कई चैलेंज दिये जावें। दो-चार स्थानों से ईसाई चुनौती दें और दो-चार स्थानों से मुसलमान चैलेंज दे, फिर देखेंगे कि स्वामी दर्शनानन्द कहाँ-कहाँ पहुँचते हैं। कहीं तो आर्यसमाज का पक्ष रखने वाला कोई थोड़ी योग्यता का शास्त्रार्थी होगा। वहाँ पहुँच कर आर्यसमाज को पराजित करेंगे और उस विजय का ढोल पीटेंगे। दर्शनानन्द स्वामी तो एक ही स्थान पर जा कर शास्त्रार्थ कर पाएँगे। यह योजना बनाकर दोनों बड़े प्रसन्न हो रहे थे।

यह चर्चा वे दोनों कर ही रहे थे कि पास की सीट पर चादर ओढ़े सोये हुए यात्री ने उठकर कहा, "मैं एक ही स्थान पर बैठा हुआ सब स्थानों पर दूरभाष से शास्त्रार्थ करूँगा। वैज्ञानिक आविष्कार दूरभाष का शास्त्रार्थ में पूरा लाभ उठाऊँगा। आप पाँच-दस-बीस जितने चाहें चैलेंज दीजिए।"

मौलाना सनाउल्ला बोले, "स्वामी जी, हमने तो सोचा था कि कोई यात्री सोया होगा। आप तो कहीं भी पीछा नहीं छोड़ते। क्या पता था कि आप यहाँ पहले ही

विराजमान हैं।"

स्वामी जी ने कहा, "हम कहाँ सोने वाले। हम तो सोतों को जगाने वाले हैं। हमारे तो ऋषि ने शिवरात्रि की रात मन का संशय मिटाने के लिए अपने पिता को भी जगा दिया। बाप को ही नहीं सोने दिया। जागते रहना व जगाना यही हमारा काम है।"

आचार्य रामदेव जी ने तभी हमें यह बताया कि मौलाना सनाउल्ला साहब ने कुछ समय तक पूज्य स्वामी जी से न्याय दर्शन भी पढ़ा था। सम्भव है कि स्वामी जी के (तब कृपाराम थे) अमृतसर निवास काल के समय पढ़ा हो। यह हमारा अनुमान है। निश्चयपूर्वक कहना **कठिन है कि कब न्याय दर्शन मौलाना को पढ़ाया।**

परमेश्वर आवश्यकता से पूर्व आविष्कार करता है

श्री स्वामी जी महाराज आदि सृष्टि में ईश्वरीय ज्ञान के आविर्भाव के आर्ष सिद्धान्त की सिद्धि के लिए एक बड़ी प्रबल युक्ति यह दिया करते थे कि संसार का नियम है कि आवश्यकता आविष्कार की जननी है (Necessity is the mother of invention) जैसे दूर की बात सुनने के लिए दूरभाष यन्त्र का आविष्कार हुआ। नदी-सागरों को पार करने के लिए जलयान तथा आकाश में उड़ने के लिए वायुयान आविष्कृत हुए। सृष्टि का नियम तो यही है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नये-नये आविष्कार करता रहता है परन्तु ईश्वरीय सृष्टि का नियम इससे विपरीत है।

परमात्मा पहले आविष्कार करता है, फिर आवश्यकता होती है। सृष्टि रचना कालक्रम में सूर्य पहले बना, देखने वाली आँखें बाद में बनीं। ऐसा तो नहीं हुआ कि पशु, पक्षी, मनुष्य आदि पहले बन गये और इनके देखने के लिए प्रकाश की आवश्यकता अनुभव करते हुए सूर्य को बनाना पड़ा। जल पहले बना और प्यास बुझाने वाले प्राणी बाद में बनाए गये। धरती आदि लोक पहले बनाए गये और निवास करने वाली योनियाँ बाद में बनीं। अन्न, वनस्पतियाँ, वायु, सब-कुछ मनुष्य के लिए पहले ही था, मनुष्य फिर बनाया गया। ऐसे ही मनुष्य की बुद्धि रूपी आँख के लिए ईश्वर ने आदि सृष्टि में ज्ञानरूपी सूर्य वेद का प्रकाश किया। यह कैसे हो सकता है कि परमात्मा जीवों को सब कुछ सृष्टि के आदि में ही दे दे और ज्ञान न देवे। सब पदार्थों का देना ही बेकार था, यदि वह ज्ञान न देता। इसलिए सृष्टि के आदि में ज्ञान का आर्विभाव होना परम आवश्यक है। क्या है स्वामी दर्शनानन्द की इस युक्ति का उत्तर?

स्वामी दर्शनानन्द पत्रकार के रूप में

आर्यसमाज ने अपने जीवन की प्रथम शताब्दी में कई कुशल पत्रकारों को

जन्म दिया। यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि आर्यसमाज के आदि युग के कई विद्वान् संन्यासी व नेता देश के सफल व सिद्ध हस्त पत्रकारों में गिन जाते थे। श्री स्वामी दर्शनानन्द ऐसे यशस्वी महापुरुषों में से एक थे। उन्होंने अपने ही बाहुबल से एक दर्जन से भी अधिक पत्र-पत्रिकाओं को विभिन्न स्थानों से चलाया और अपनी सम्पादन कला की धूम मचा दी।

आर्यसमाज में और दूसरा कोई व्यक्ति हमें दिखाई नहीं देता, जिसने इतने पत्र निकाले हों अथवा जो इतने पत्रों का सम्पादक रहा हो। श्री पं० लेखराम जी, पं० हरिशंकर शर्मा, श्री सुदर्शन जी (कहानीकार) श्री पं० इन्द्रजी, श्री पं० पद्मसिंह जी, श्री महाशय चिरंजीलाल जी प्रेम, श्री महाशय कृष्ण, श्री पं० जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती आदि कई आर्य पुरुष लम्बे-लम्बे समय तक एक से अधिक पत्रों के (समय-समय पर एक-ही समय में नहीं) सम्पादक रहे परन्तु इतनी बड़ी संख्या में किसी आर्य ने इतने पत्र निकाले हों—ऐसा कोई दूसरा उदाहरण नहीं है। स्वामी जी के पश्चात् श्री पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री और फिर भारतेन्द्र जी सर्वाधिक पत्रों के सम्पादक रहे।

देश-विभाजन के पश्चात् श्री भारतेन्द्र नाथ का भी कई पत्रों से सम्बन्ध रहा और ये भी एक परिश्रमी व सफल पत्रकार थे परन्तु श्री भारतेन्द्र भावनाओं को उभारने वाले लेख लिखना तो जानते थे, वह दार्शनिक लेखक नहीं थे। दूसरा अन्तर दोनों में यह था कि स्वामी जी ने तो घर फूँक तमाशा देखा। ईश्वर के नाम पर सब कुछ किया। भारतेन्द्र जी एक गृहस्थी लगनशील साहित्य प्रेमी पत्रकार थे।

श्री महाशय कृष्ण के दैनिक प्रताप को पढ़ने के लिए लोग तड़पते व तरसते थे। उनके विरोधी भी उनके लेखों को प्रातः उठते ही पढ़ते थे। महाशय कृष्ण बड़ी उत्सुकता से प्रति सप्ताह रिफार्मर में पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय के लेख पढ़ा करते थे और कई बार महाशय जी ने यह कहा कि राजनीति में तो नित्य नई घटना घटती रहती है और मैं इन घटनाओं पर लिखता रहता हूँ। अचम्भे की बात यह है कि उपाध्याय जी प्रति सप्ताह और पूरा वर्ष उन्हीं विषयों पर लिखते रहते हैं, जिनको उनके पाठक वर्षों से पढ़ते चले आ रहे हैं। वही 'ईश्वर की सत्ता', 'ईश्वर का स्वरूप', 'कर्म फल सिद्धान्त' पुनर्जन्म, 'वेद ईश्वरीय ज्ञान' श्राद्ध व मूर्ति पूजा आदि। पता नहीं उपाध्याय जी की लेखनी में क्या जादू है, जो पाठक स्वाद ले लेकर उनके सम्पादकीय लेख पढ़ते हैं।

जो बात उपाध्याय जी के लिए महाशय कृष्ण जी कहा करते थे, वही हम श्री स्वामी दर्शनानन्द जी के बारे में कहेंगे। स्वामी जी को चटपटी चालू समस्याओं पर लिखने में रुचि न थी। यह नहीं कि Current Problems (सामाजिक

समस्याओं) पर ये लिख नहीं सकते थे। कभी लिखना ही पड़ा तो बड़े अनूठे ढंग से इन समस्याओं पर भी लेखनी चलाया करते थे। उनके सम्पादकीय लेखों का क्षेत्र Fiction (कथा, कहानी, उपन्यास) नहीं था। ये तो जन्मजात दार्शनिक थे। और Philosophy (दर्शन) ही उनके लेखों का प्रिय विषय था।

उनकी लेखन शैली की एक विशेषता यह थी कि बड़ी रोचक शैली में, ओजस्वी भाषा में दार्शनिक विषयों पर लम्बे-लम्बे लेख लिखा करते थे। पारिभाषिक, दार्शनिक शब्दों का पुष्कल प्रयोग करते थे परन्तु इससे उनके लेख शुष्क नहीं बनते थे। ये शुष्क से शुष्क विषय को भी सरस बनाना जानते थे। उनके लेखों के नीरस होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता था।

प्रतिपक्षी को उत्तर देते समय हास्य-व्यंग्य तो उनके लेखों में होता था परन्तु असंसदीय शब्दों का प्रयोग आपने कभी नहीं किया। आर्यसमाज के नेताओं से कभी मतभेद हुआ तो कठोर शब्दों में भी अपना विरोधी मत प्रकट कर दिया करते थे। यह बात प्राय: लिखा करते थे। विरोध करने से फकीर (साधु) का कोई क्या बिगाड़ सकता है?

स्वामी जी की एक आर्य पत्रकार के रूप में उस समय धूम मची, जब कृपाराम के रूप में आपने 30 जून सन् 1889 को 'तिमिर नाशक' पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया। स्वामी जी ने कई स्थानों से पत्र निकाले। उनके कुछ पत्रों के नाम इस प्रकार से हैं:—'वैदिक धर्म', 'गुरुकुल समाचार', 'महाविद्यालय समाचार', 'मुबाहिसा', 'आर्य मैगजीन', 'वैदिक फिलासफी', 'बृहस्पति', 'आर्य सिद्धान्त', 'वैदिक धर्म प्रचारक', 'ऋषि दयानन्द', 'तालबे इल्म', 'वैदिक मैगजीन', 'रिसाला मुअल्लम', 'ओरियण्टल फ़िलासफी' आदि। 'आर्य विजयपताका' और 'वैदिक सिद्धान्त भण्डार' हिन्दी में निकालने की 1899 में घोषणा की गई। अवश्य निकाले होंगे। 'दर्शन अध्यापक' भी हिन्दी मासिक दर्शनों की व्याख्या के लिए निकाला गया। यह कृपाराम युग की देन थी। यह नहीं भूलना चाहिए कि 'वैदिक धर्म' व 'वैदिक धर्म प्रचारक' दो अलग-अलग पत्र थे। इसी प्रकार 'आर्य मैगजीन' व 'वैदिक मैगजीन' दो भिन्न पत्र थे।

ये चारों पत्र कृपाराम काल के हैं। 'वैदिक धर्म' और 'आर्य मैगजीन' दोनों चालीस-चालीस पृष्ठों के होंगे। यह घोषणा पण्डित कृपाराम जी ने की परन्तु उनका यह स्वभाव था कि ग्राहक संख्या 500 हो जाने पर पृष्ठ संख्या साठ व साठ से भी ऊपर कर दिया करते थे। व्यापारिक लाभ अथवा आर्थिक दृष्टि से तो ये सोचते ही न थे।

पुनः प्रकाशित

सत्यार्थ प्रकाश : महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य : अजिल्द रु. 80.00 / 110.00 सजिल्द

सन् 1925 में महर्षि दयानन्द सरस्वतीजी के जन्म को सौ वर्ष पूरे हो चुके थे। इस अवसर पर मथुरा में 'जन्मशताब्दी समारोह' का विश्व स्तर पर आयोजन किया गया, जिसके प्रधान आर्य जगत् के प्रमुख विद्वान् ऋषिभक्त, योगी एवं नेतृत्व करने की असीम क्षमता से युक्त महात्मा नारायण स्वामी जी थे। इस समारोह में लाखों की संख्या में लोग मथुरा पहुंचे थे जो एक अविस्मरणीय आयोजन बन गया था। इस अवसर की महत्ता को समझकर श्री गोविन्दरामजी ने 'सत्यार्थप्रकाश' को प्रकाशित कर सस्ते मूल्य पर प्रसारित करने का संकल्प किया।

तब तक 'सत्यार्थप्रकाश' केवल परोपकारिणी सभा द्वारा ही प्रकाशित किया जाता रहा था। स्वामी श्रद्धानन्द जी के आशीर्वाद से आपने यह साहसिक पग उठाया, और इतिहास में यह अंकित कर दिया कि परोपकारिणी सभा के एकाधिकार के पश्चात् 'सत्यार्थप्रकाश' को प्रकाशित करने वाले वह पहले प्रकाशक थे।

इसके पश्चात् अनेकों प्रकाशन–संस्थाओं ने सत्यार्थप्रकाश का प्रकाशन कर इसका प्रचार–प्रसार किया। हमारे यहां से भी सत्यार्थप्रकाश के अनेक उत्तम संस्करण प्रकाशित हुए इन संस्करणों का आर्य जगत् ने भरपूर स्वागत किया।

यह शुद्ध और प्रामाणिक संस्करण कम्प्यूटर कृत मुद्रित है, शुद्ध सामग्री, नयनाभिराम छपाई, उत्तम कागज एवं सुन्दर आवरण आपको अवश्य पसन्द आएगा और आप इससे लाभान्वित होंगे ऐसी आशा है। कुल 512 पृष्ठ।

प्राप्ति स्थान :

विजयकुमार गोविन्दराम हासानंद

4408, नई सड़क दिल्ली–6

दूरभाषः 01123977216, 65630255

वेदप्रकाश R.No. 627/57 Regd. No. DL(DG)-11/8030/2012-14, U(DGO) 01/2013-14 15.07.2013

पुनः प्रकाशित पुस्तकें

वैदिक सिद्धान्तों पर सहेलियों की वार्ता : पं. सुरेशचन्द्र वेदालंकार रु. 25.00

वैदिक सिद्धान्त अपने आप में सत्य, सनातन और शाश्वत हैं। इन्हीं वैदिक सिद्धान्तों और आर्यसमाज के दृष्टिकोण को सर्वसाधारण को समझाने के लिए लेखक ने इन्हें प्रश्नोत्तर शैली में अत्यन्त रोचक व सरल भाषा में प्रस्तुत किया है।

इस पुस्तक का यही उद्देश्य है कि यदि वैदिक सिद्धान्त हमारे मस्तिष्क में बैठ जाएँ तो हम वैदिक और अवैदिक सिद्धान्तों के अन्तर को समझने में समर्थ होंगे। और इनके प्रचार-प्रसार द्वारा ही हमारे सभी कष्ट दूर हो सकते हैं। आईए महर्षि दयानन्द द्वारा दिखाई गई ज्ञानलोक की इन किरणों से अज्ञान के अन्धकार को दूर भगाएँ।

श्रीरामचन्द्र गौरव : आचार्य ब्र० नन्दकिशोर रु. 15.00

वैदिक पंचमहायज्ञ पर आधारित इस छोटी सी पुस्तिका में ऐतिहासिक महापुरुष श्री रामचन्द्र जी के विषय में जानकारी प्राप्त होगी व माता सीता जी के दान-त्याग-धर्मपरायणता के विषय में भी जानकारी प्राप्त होगी।

आचार्य गौरव : आचार्य ब्र० नन्दकिशोर रु. 15.00

लेखक ने आचार्य के गौरवशाली रूप की सरल व सुन्दर व्याख्या की है।

आगामी प्रकाशन

ऋषि दयानन्द के भक्त, प्रशंसक और सत्संगी : डॉ. भवानीलाल भारतीय रु. 95.00

प्रस्तुत ग्रन्थ में लेखक ने ऐसे 50 व्यक्तियों के जीवनवृत्त तथा स्वामी दयानन्द से इनके पारस्परिक सम्बन्धों की विवेचना की है, जो भक्त, प्रशंसक तथा सत्संगी—इन तीन वर्गों में परिगणित किये जा सकते हैं।

भक्त से हमारा अभिप्राय उन लोगों से है जो स्वामी दयानन्द के महनीय व्यक्तित्व तथा उनकी लोकहित युक्त भावनाओं के प्रति प्रणतभाव रखते थे। यह आवश्यक नहीं कि ऐसे लोग पूर्णतया वैदिक विचारधारा के अनुयायी ही रहे हों।

प्रशंसकों की श्रेणी में वे लोग हैं जो पौराणिक विश्वासों के प्रति निष्ठा रखने वाले उस सनातनी वर्ग के नेता थे जिनसे स्वामी जी का दीर्घकाल पर्यन्त संघर्ष तथा प्रतिद्वन्द्विता चलती रही।

सत्संगी वर्ग में हम उन लोगों की गणना कर सकते हैं जो विचारों और आस्थाओं में स्वामी जी से कोसों दूर होते हुए भी स्वामी दयानन्द का सत्संग लाभ करना परम उपयोगी मानते थे और उन्हें देश एवं जाति का हित चिन्तक समझते थे।

प्रकाशक-अजयकुमार, मुद्रक-अजयकुमार, स्वामी-अजयकुमार, गोविन्दराम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली-6, अजयकुमार द्वारा सम्पादित, प्रिंटर्स-अजय प्रिंटर्स, 1586/C-13, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 में प्रिंट करा, वेदप्रकाश कार्यालय, 4408, नई सड़क, दिल्ली-6 से प्रसारित किया। न्यायक्षेत्र-दिल्ली।